॥ श्रीगुरुचरणकमलेभ्योनमः ॥

॥ श्रीसीतारामाभ्यांनमः ॥

॥ श्रीमते वीरहनुमतेनमः ॥

अथ

वैदिकमणिसन्दर्भः

संक्षेपतः ।

—:※:※:※:—

अथ रसनिरूपणम् ।

अर्थात् ।

रस का निरूपण प्रारम्भ करते हैं ।

रस इति ब्रह्मणः पर्य्याय नाम ध्येयः ।

अर्थात् ।

रस यह श्रीरामजी का एक दूसरा नाम है। यथा श्रुतिः—

यजुर्वेदीयतैत्तरीयोपनिषदि सप्तमानुवाके

रसोवैसः

अर्थात् ।

श्रीरामजी रस हैं ।

सरसो बहुप्रकारो यथा :—

सामवेदीयछान्दोग्योपनिषदिशाण्डिल्यविद्यायां चतुर्थप्रपाठके ।

सर्वरसो रसंह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवतीति

अर्थात् ।

वह रस बहुत प्रकार का है । जिन सब रसों को पाकर जीव आनन्द को प्राप्त होता है । वे सब रस अलंकार ग्रन्थों में शृंगार, वीरादि नाम से प्रसिद्ध हैं यथा

शृंगारवीरकरुणाद्भुतहास्यभयानकाः ।
वीभत्स्यरौद्रशान्ताख्या रसानवउदाहृताः॥

अर्थात् ।

शृंगार, वीर, करुणा, अद्भुत, हास्य, भयानक, वीभत्स्य, रौद्र और शांत ये नव प्रकार के रस हैं । इन नवों रसों में शृंगार रस रसराज है । क्योंकि:—

शृङ्गं उच्चं रिच्छति गच्छति इति निर्वचनात् ।

अर्थात् ।

शृंग शब्द उच्चपद वाच्य है उस उच्चपद पर जो प्राप्त है उसे शृंगार कहते हैं । यह निर्विवाद है ।

इसी शृंगार का पर्य्याय रसराज, शुचि, उज्वल और

मधुर है। रस राज पद से सब रसों का राजा हुआ, शुचि से सब से पवित्र हुआ, उज्वल से सब से स्वच्छ हुआ और मधुर से सब से स्वादिष्ट हुआ।

अतः विज्ञ लोगों को विदित है कि सर्वोत्तमश्रृंगार रस है।

तथा च आप्तवाक्यं भोजप्रबन्धे।

श्रृंगारमेवरसनाद् रसमामनामः॥

अर्थात्।

भोज प्रबंध में उत्तम लोगों की वाक्य है कि श्रृंगार ही को स्वादिष्ट होने से हम रस मानते हैं।

इस श्रृंगार रस का आलम्बन दिव्य नायक श्रीरामजी हैं तथा च श्रुतिः

ऋग्वेदे २ अष्टके २ अध्याये २६ वर्गे १ मण्डले २१ अनुवाके १५६ सूक्ते। द्वितीयमंत्र

यः पूर्व्याय वेधसे नवीयसे सुमज्जानये विष्णवे ददाशति योजातमस्यमहतो महीब्रवत सेदुश्रवोभियुज्यं चिदभ्यसत्।

अर्थात्।

जो भक्त प्राचीन, सर्व विधाता भाव सम्यक् प्रकार सुखदाता, सर्वदा नवीन उपलक्षित पूर्णकिशोर, सुन्दरी मद भरी हुई नायिका के नायक विष्णुभाव सुन्दरी मदरेक्षणा श्रीसीतापति श्रीरामजी के निमित्त दान करता है और जो

भक्त महान् श्रीरामजी का जन्मादि चरित्र कहता है वे दोनों श्रव नाम निघण्टुमें अन्न का हैं तदुपलक्षित सर्वभोग उससे युक्त रहते हैं। तथा च स्मृतिः श्रीमद्भागवतेः—

आयुरारोग्यमर्थांश्च भोगांश्चैवानुषंङ्गकान्।
ददाति ध्यायतांपुंसामपवर्गप्रदोहरिः ॥

अर्थात्।

श्रीमद्भागवत में भी हैं कि यद्यपि हरिमोक्षदाता हैं तथापि आयु, आरोग्य अर्थ और भोग प्रसंगतः ध्यान करने वाले पुरुष को देते हैं।

इस मंत्र में यदि विष्णु कहने से किसी को भ्रम हो कि अन्य देवता हैं तत्र प्रमाण श्रीमद्वाल्मीकीये

सहिदेवैरुदीर्णस्य रावणस्य वधार्थिभिः ।
अर्थितोमानुषे लोकेजज्ञेविष्णुः सनातनः॥इत्यादि

इस श्लोक से स्पष्ट विष्णु श्रीरामजी हैं।

अर्थात्।

वे श्रीराम सनातन विष्णु देवतावों की प्रार्थना से उद्धत रावण के मारने के निमित्त मनुष्य लोक में जन्म लिये हैं। इस विष्णु शब्द से श्रीरामजी का बोध हुआ श्रुतियों में श्रीरामजी के बहुत से नाम हैं।

यथा ऋग्वेदे २ अष्टके ३ अध्याये २३ वर्गे १ मण्डले २२ अनुवाके १६४ सूक्ते ४६ मंत्र।

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स

सुपर्णो गरुत्मान् एकंसद्विप्रा वहुधावदन्त्य-
ग्नि यमंमातरिश्वानमाहुः ॥

अर्थात् ।

एक सत ब्रह्म जो अग्नि है उसको विप्र अर्थात वैदिक ब्राह्मण इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि दिव्य सुपर्ण गरुत्मान, यम, मातरिश्वा इत्यादि बहुत प्रकार के नाम कहते हैं ।

तथा च मनुस्मृतिः ।

एतमेके वदन्त्यग्निं मनुमन्ये प्रजापतिम् ।
इन्द्रमेके परे प्राणमपरे ब्रह्मशाश्वतम् ॥

अर्थात् ।

मनुस्मृति में भी इस ब्रह्म को कोई अग्नि कोई मनु कोई प्रजापति कोई इन्द्र कोई प्राण और कोई शाश्वतब्रह्म कहता है । इससे स्पष्ट है कि श्रीरामपरतम ब्रह्म के श्रुति स्मृति में अनेक नाम हैं ।

अतः उपरोक्तजो ऋग्वेदके द्वितीयाष्टकके द्वितीयाध्याय २६ वर्ग प्रथम मंडल २१ अनुवाक १५६ सूक्तकी जो द्वितीय मंत्रहै उस में सुमज्जानी विष्णु श्रीरामजी हैं जो शृंगार रस के आलम्बन नायक हैं ।

सुमज्जानी शब्दही से श्रीरामजी शृंगार रस प्रधान हैं

क्योंकि जिसके समीप सुन्दरमद भरी प्रिया है वह स्वतः रसिक शिरोमणि है। पुनः श्रुतिः—

ऋग्वेदे प्रथमोष्टके ६ अध्याये प्रथम मण्डले १३ अनुवाके ८३ सूक्ते ५ मन्त्रे।

युक्तस्ते अस्तु दक्षिण उतसव्यः शतक्रतो। ते न जायामुपप्रियां मन्दानोयाह्यन्धसो यो जा न्विन्द्रतेहरी।

अन्वय।

हे शतक्रतो बहुबुद्धिमन्! ते तव सव्यः उत दक्षिणः रथ अध्याहारः युक्तः अस्तु ते न प्रियां जायां उपयाहि। हे इन्द्र! ते हरीनुयोया। कीदृशः इन्द्रः अन्धसः मन्दानः॥

अर्थात्।

हे बुद्धिमन् तुम्हारा बाईं और दाहिनी तरफ रथ में घोड़ा जोड़ा जाय, उस रथ पर सवार होकर प्यारी स्त्री के समीप जाइये। हे इन्द्र तुम्हारा हरी नाम घोडा निश्चय युक्त हो अर्थात् जोड़ा जाय कैसा वह इन्द्रहै जो अन्न उपलक्षित सर्व मदकारक भोग से हर्ष में भरा हो। पुनः श्रुतिः

ऋग्वेदे १ अष्टटके ६ अध्याये ४ वर्गे १ मंडले १३ अनुवाके ८३ सूक्ते ६ मंत्रे

युनज्मिते ब्रह्मणा केशिनाहरी उपप्रयाहि दधिषेगभस्त्योः उत्वासुतासो रभसा अमन्दिषुः पूषण्वान्वज्रिं समुपत्न्यामदः

अन्वयः ।

हे वज्रि उपलक्षित वज्रमणिभूषण भूषित ब्रह्मणा ते केशिना हरी युनज्मिगभस्त्योः लगाम इति अध्याहारः दधिषे । उत सुतासः रभसावेगेन अमन्दिषुः मदं कुर्य्युः हे पूषणवान् इति पत्न्याउसंमदः ।

अर्थात् ।

हे बज्र उपलक्षित वज्रमणि आदि सर्व भूषण भूषित श्रीरामजी ब्रह्म नाम मंत्र से आपके बड़े केश वाले घोड़े रथ में जोड़ते हैं दोनों हाथ से ल गाम धरो। और अनेकपाकशाला धिकारी बहुत शीघ्र भोजन कराकर आपको हर्ष कियेहैं हेपूषणवान् अर्थात तुष्ट हुए श्रीरामजी प्रिया के समीप जाइये निश्चिन्त पत्नी श्रीजानकीजी के साथ सम्यक् प्रकारसे आनन्द कीजिये । तात्पर्य्य इन मंत्रों से कि हम आपके बड़े केश वाले घोडों को जोत चुके, रसोइया भी आपको आनन्द पूर्वक खिला पिला चुके, अब जाकर पत्नी के साथ आनन्द करो ।

यहां स्पष्ट शृंगार रस पोषण उपरोक्त मंत्रों से श्रीराम जी श्रुति स्पष्ट रसिक शिरोमणि हैं ।

रसिक शिरोमणि श्रीरामजी सर्व नायकोत्तमोत्तम हैं ।

तथा च श्रुतिः

ऋग्वेदे ८ अष्टके ४ अध्याये २ वर्गे १० मण्डले ७ अनुवाके ८६ सूक्ते ९ मंत्रे ।

अवीरामिव मामयं शरारु रभिमन्यते उता

हमस्मि वीरिणीन्द्रपत्नीमरुत्सखा विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ।

अशोक बटिका में श्रीजानकीजू श्रीमारुतिजी से कहती हैं :—

अयंशरारुः हिंसकः रावणः माम् अवीरामिव अभिमन्यते उत अहम वीरिणी इन्द्र वाच्य श्रीरामपत्नी अस्मि की दृशः इन्द्रः श्रीरामः विश्वस्मात उत्तारः ।

हे हनुमान! यह हिंसक रावण मुझे अवीरा जानता है अर्थात वीर राघव से रहित जानता है और हम वीरिणी हैं अर्थात वीरराघव की हैं, हम इन्द्र वाच्य श्रीरामपत्नी हैं ।

इन्द्र और श्रीरामजी का एक अर्थ है इन्धी दीप्तौ से इन्द्र होता है और राजृदीप्तौ से राम होता है । दोनों शब्द पर्य्याय हैं अतः वेद में इन्द्रादिक पद श्रीरामवाचक हैं यथा श्रुति :—

ऋग्वेदे ३ अष्टके ३ अध्याये २१ वर्गे ३ मण्डले ४ अनुवाके ५३ सूक्ते १३ मंत्रे ।

विश्वामित्रा अरासत ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे करदिन्नः सुराधसः ।

अर्थात् ।

जिस वज्रमणि भूषण भूषित इन्द्रवाचक श्री रामजी को श्रीविश्वामित्रजी ने वला नाम विद्या दिया है ।

वह श्रीरामजी हम सब को सुन्दर धनवाले करैं, भाव सुन्दर धन देवें। इस मंत्र से श्रुतिस्पष्ट इन्द्र वाच्य श्रीरामजी हैं। वह इन्द्र श्रीरामजी सब से उत्तम है अर्थात् सर्व नायकों से श्रेष्ठ हैं।

अतः उपरोक्त नायकोत्तमोत्तम प्रमाण वाली ऋग्वेद की ८ अष्टक ४ अध्याय की ६वें मंत्र से स्पष्ट है कि श्रीरामजी सर्व नायकोत्तमोत्तम औरसबसे पूजित महानहैं।

तथा च वाल्मीकीये युद्धकांडे ब्रह्मस्तुतौ।

इन्द्रकर्मा महेन्द्रस्त्वं।

अर्थात्।

त्वं इन्द्रकर्मा महेन्द्रः आप इन्द्र के कर्म भोमादि में महाइन्द्र हैं।

सर्व नायकोत्तम रसिकशिरोमणि श्रीरामजी अत्यन्त सुन्दर हैं। तथा च श्रुतिः—

ऋग्वेदे ४ अष्टके ७ अध्याये ३२।वर्गे ६ मण्डले ४ अनुवाके ४७ सूक्ते ८ मंत्रे।

उरुंनो लोकमनुनेषि विद्वान् सर्वज्ज्यो तिरमृतं स्वस्तिरिष्वात इन्द्रस्थविरस्यवाहूउपस्थे यां शरणावृहन्ता।

अर्थात् ।

हे इन्द्र वाच्य श्रीरामजी आपके अत्यन्त सुन्दर विशाल सर्व रक्षक दोनों वाहू के हम उपस्थान करते हैं, भाव-शरण होते हैं। हम को आप विस्तार सुख रूप, प्रकाश रूप अमर लोक में प्राप्त कीजिए ।

इस श्रुति से स्पष्ट है कि श्रीरामजी भुजोपलक्षित भावों से सर्वांग अत्यन्त सुन्दरतम हैं तथा सर्व रक्षक हैं और उनका सान्तानिक लोक सुख प्रकाश अमर है ।

सर्व नायकोत्तमोत्तम रसिक शिरोमणि अत्यन्त सुन्दर तम श्रीरामजी शृंगार मूर्ति हैं । तथाच श्रुतिः

शुक्ल यजुर्वेदे वाजसनेयि संहितायाम् ४० अध्याये ६ काण्डे माध्यन्दिनीय शाखा ८ मंत्रे ।

सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳशुद्धम पापविद्धम् । कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथा तथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ।

अन्वयः ।

सः कविः मनीषी परिभूः स्वयम्भूः एतच्छिशेषेण विशिष्टः भक्तः शाश्वतीभ्यः समाभ्यः याथातथ्यतः अर्थान्व्यदधात् शुक्रं अकायं अव्रणं अस्नाविरं शुद्धं अपापविद्धं श्रीरामंपर्य्यगात् प्राप्नोतीत्यर्थः ।

अर्थात्।

वह कवि—सर्वदर्शी, मनीषी—बुद्धिमान् परिभूः —सर्वरूप, स्वयम्भूः—ब्रह्मस्वरूपआदि विशेषणों से युक्त भक्त शाश्वतीभ्यःसमाभ्यः अर्थात् अनन्त वर्षों के लिये भाव नित्य याथातथ्यतः अर्थान्व्यदधात् भाव जैसा चाहिए तैसा अर्थों को उपभोग करता है और शुक्र नाम उज्ज्वल पर्य्याय शृंगार रूप अकायम्---प्राकृत शरीर रहित भाव दिव्य, अव्रणां---छिद्र रहित भाव संहनन गुणोपेत, अस्नाविरं---नस रहित भाव प्राकृत शरीर की तरह नसों से रहित। शुद्धं--- निर्मल। अपापविद्धं---अधर्मादि रहित श्रीरामजी को प्राप्त होताहै।

इस मंत्र से स्पष्ट है कि श्रीरामजी शृंगार मूर्ति और संहननगुणोपेत दिव्य हैं।

ऐसे सर्व नायकोत्तमोत्तम अत्यन्त सुन्दर रसिक शिरोमणि शृंगार रसाकार मूर्ति श्रीरामजी की श्रुति भगवती प्यारे, प्रीतम, मित्र आदि पुकार कर स्तुति करती है। यथा श्रुतिः।

सामवेदे उत्तरार्चिके ५ प्रपाठके २ अध्याये ८ खण्डे प्रथमार्द्धे १८ सूक्ते १ ऋचा १ मंत्र

प्रेष्ठंबो तिथि ँस्तुषे मित्रमिव प्रियंअग्ने रथंन वेद्यम्।

अन्वयः ।

हे अग्नेवेद्यं रथं न प्रेष्ठं वः नामत्वां अतिथिं प्रिय मित्रं इवस्तुषे।

अर्थात् ।

हे अग्रगण्य अग्निवाच्य श्रीरामजी ! धन प्राप्ति कारक रथ, अत्यन्त प्रिय मित्र अतिथि की तरह आप की स्तुति करता हूँ ।

इस मंत्रसे स्पष्ट विप्रलंभा नायिका अर्थात् वियोगिनी सखी आपको अत्यन्त प्रिय मित्र सम्यक् प्रकार सुखदाता पुकारती है ।

उत्तामोत्तम नायकका लक्षण अलंकार ग्रन्थमें प्रसिद्ध है कि महाकुलीन, उदार, महाभाग्यवान् विदग्ध अर्थात् अत्यन्त चतुर, तेजस्वी, धर्मात्मा, उज्ज्वल नाम अत्यन्त सुन्दर ये सब गुण जागते हैं ।

तथा साहित्य रत्नाकरे ।

महाकुलीनत्वमुदारता च तथा महाभाग विदग्धभावौ । तेजस्विता धार्मिकतोज्वलत्व ममीगुणाजाग्रति नायकस्य ।

ये उपरोक्त गुण श्रीरामजी में स्पष्ट हैं ।

अर्थात् ।

सूर्य्यवंशोत्पन्न से महाकुलीन ।

विभीषणादिकको त्रैलोक्य की विभूति दातासे उदार ।

जिसकी ब्रह्मादिक स्तुति करते हैं इससे महाभाग ।

जिसे महर्षि श्रीवाल्मीकिजी प्रज्ञावान प्राज्ञ सम्मतः

लिखते हैं । इससे विदग्ध तथा

वैदग्धे साहित्य रत्नाकरे ।

श्लोक ।

सीताशोकममर्तदैन्यमसुरक्रौर्य्यं च मन्दोदरी
कण्ठे मंगलसूत्रमात्मलघुतामेकेषुणायोलुनात्
लीलोन्मीलितसप्तशालवितते: स्वेतातपत्रायुत
च्छेतुस्तस्य विदग्धता वितरणे ब्रह्मापिजिह्मायते ॥

अर्थात् ।

जिस श्रीरामजी के चातुर्य्यता के व्याख्यान करने में ब्रह्मा भी टेढ़े होजाते हैं भाव, मुंह फिर जाता है, वर्णन नहीं करसकते क्योंकि 'यः रामः' जो श्रीरामजी एक बाण से अनेक काम किये हैं, कौन काम ? सीता शोकं, अमर्त-दैन्यं असुर क्रौर्य्य, मन्दोदरी कंठे मंगल सूत्रं, आत्म लघुता एकेन ईषुणा बाणेन लुनात अर्थात श्रीसीताजी का शोक, देवतावों की दीनता, असुरों की कठोरता, मंदोदरी कंठ के मंगल सूत्र और अपनी लघुताको एकही

बाण मे काट दिया। वह श्रीरामजी कैसे हैं सप्तशाल वितते: स्वेतातपत्रायुतच्छेतु: अर्थात सात सखुवा की पंक्ति और दसहजार स्वेत छत्र को छेदन करने वाले हैं इति वैदग्ध्य: ।

तेजस्विता—अर्थात् तेजस्वी तथा वाल्मीकीये 'सूर्य्यस्यापिभवेत्सूर्य्य' इत्यादि जिसे श्रीमद्गोस्वामीजी मानसरामायण में 'हेतु कृसानु भानुहिमिकरको' लिखते हैं।

धार्मिकता----अर्थात् धर्म गुण तथा च वाल्मीकीये 'सत्ये धर्मे इवापर' इत्यादि।

उज्वलत्व--अर्थात् सुन्दरता यथा वाल्मीकीये वालकाण्डे "गुणाद्रूप गुणाच्चापि प्रीतिर्भूयोऽभिवर्द्धते" इत्यादि।

इन उपरोक्त वचनों से सर्वोत्तम गुणालय, नायकोत्तमोत्तम अत्यंत सुन्दरतम शृङ्गार रसाकार रसिक शिरोमणि श्रीरामजी में वहु पत्नीत्व हैं तथा च:---

ऋग्वेदीय कौषीतकी उपनिषदि पर्य्यंकविद्यायाम्।

मुक्तजीवप्रस्थान वर्णने।

तदरो हदो विजरा नदीमुहूर्तायष्टिहा तैल्यं वृक्षं सालज्यं संस्थानमपराजितमायतनं इन्द्रप्रजापतिद्वारगोपौ विभुविमितं विचक्षणा आसन्दो अमितौजा: पर्य्यंकस्तस्मिन्ब्रह्मास्ते तं ब्रह्मविद्गच्छति तं ग्रत्याह अभिधावद् ह्येनं

वह्मालंकारेणालंकुरुत तं पंचशतान्यप्सरसोधावन्ति. शतं वासोहस्ताः शतमंजनहस्ताः शतंचूर्णहस्ताः शतं मालाहस्ताः शत फणाहस्तास्तं ब्रह्मालङ्का-रेणालंकुर्वन्ति स ब्रह्मालङ्कारालंकृतो ब्रह्मैवा-भिगच्छति ।

अर्थात् ।

तत् नाम उस सान्तानिक, गोलोक, अयोध्या अपराजिता ब्रह्मलोक आदि शब्दाभिधेय श्रीराम दिव्य-धाम में अरहद-सर्व रस भरा हुआ तालाब है ।

विजरानदी—विजरानदी है जिस नदी में स्नान करने से जरादिक विकार नहीं होता है भाव दिव्य नवी-नावस्था रहती है ।

मुहूर्तायष्टिहा—मुहूर्त उपलक्षित सर्व कालावयव स्वरूपधारी छड़ी वरदार रहते हैं ।

तैल्यं वृक्षम्—अविछिन्नधारावत् अमृतस्रावी कल्पवृक्ष है ।

सालज्यम्—सर्व रस मय स्थान है ।

अपरजितमायतनम्—जो किसीसे न जीता जाय ऐसा स्थान, भाव श्रीअयोध्याजी ।

इन्द्रप्रजापतिद्वारगोपौ—इन्द्र और प्रजापति

नामक द्वार रक्षक हैं ।

विभुविमितम्---सर्व व्यापक श्रीरामजी की इच्छा निर्मित मंडप है ।

विचक्षणाआसन्दी----सर्वज्ञान प्रकाशिका सभा है।

अमितौजा:पर्य्यंकः----जिसके स्पर्श करने से अमित वल होता है ऐसा पर्य्यंक है ।

तस्मिन्ब्रह्मास्ते----उस पर्य्यङ्क के ऊपर परब्रह्म श्री श्रीरामजी रहते हैं ।

तंब्रह्मविद्गच्छति----उस स्थान में ब्रह्म ज्ञानी भक्त जाता है ।

तंप्रत्याह अभिधावत्----उस भक्त के प्रति परब्रह्म श्रीरामजी अपने परिकरों से कहते हैं कि तुम सब उस भक्त को लेने के लिये दौड़ो ।

ह्येनं ब्रह्मालंकारेणालंकुरुत----उस भक्त को ब्रह्मके अलंकार से भावदिव्यालंकार से भूषित करो ।

तंशतं वासोहस्ताः शतमंजनहस्ताः शतंचूर्णहस्ताः शतंमालाहस्ताः शतंफणहस्ताः पंचशतान्यप्सरसोधावन्ति ----उस भक्त के समीप १०० अप्सरा बस्त्र हाथों में लेकर १०० अंजन लेकर १०० चूर्ण भाव अंग मर्दन आदि लेकर १०० माला लेकर और १०० भूषण लेकर इस

प्रकार ५०० अप्सरायें दौड़ती हैं।

तंब्रह्मालंकारेणालंकुर्वन्ति----उस भक्त को दिव्य अलंकार से भूषित करती हैं।

सब्रह्मालंकारालंकृत ब्रह्मैवाभिगच्छति—वह दिव्या-लंकार से भूषित भक्त ब्रह्म के समीप जाता है।

इह श्रुति से स्पष्ट हुआ कि दिव्य-धाम विहारी सर्वोत्तमगुणालय नायकोत्तमोत्तम अतीव सुन्दरतम शृंगार रसाकार मनहरणमूर्ति रसिक शिरोमणि श्रीरामजी के अनन्त स्त्रियां हैं क्योंकि जिनके भक्तके लिए इतनी स्त्रियां स्वागत मेंजाती हैं तो उन की स्वसेवा में कितनी स्त्रियां हैं भाव असंख्य हैं। उसीको महर्षि लिखते हैं "रामस्य परमास्त्रिय" इत्यादि इससे बहुपत्नीत्वसिद्ध हुआ।

एवम् शृंगार रूप परतम ब्रह्म श्रीरामजी दो स्वरूप से भक्तों को सुख देते हैं। तथा च श्रुतिः

ययुर्वेदीयबृ॰द॰रण्य उपनिषदि प्रथमाध्याये।

द्वेवा ब्रह्मणोरूपं मूर्त्तंचैवामूर्त्तं च।

अर्थात्।

श्रीरामजी के दो रूप हैं। साकार और निराकार। निराकार रूप साक्षात् के साधन शमदमादिसम्पत्ति है और साकार साक्षात रूप का साधनभक्ति है

जिस भक्ति के अनेक भेद हैं वह भक्ति नाम सेवा का है। सेवा जैसी स्त्री रूप से होती है वैसी दूसरे रूप से नहीं होसकती है। यथा:—

आप्तवाक्यम्

चिन्ता समोनास्ति शरीरशोषणे विद्या समोनास्ति शरीरभूषणे। माता समोनास्ति शरीर पोषणे भार्य्यासमोनास्ति शरीरतोषणे।

एवम् स्त्री के सदृश तुष्ट करने वाला कोई नहीं है और शृंगाररस की मुख्य आलम्बन नायिका है।

उस नायिका के रस प्रादुर्भाव उद्दीपक सखीसङ्ग, सुगन्ध भूषण और शय्या आदि हैं।

इसी से आचार्य्य लोग इस जीव को श्रीमिथिलाधिप राजकिशोरी श्रीजानकीजी का सम्बन्ध देते हैं।

वे श्रीमिथिलाधिप राजकिशोरी जानकी श्री सीताजी कैसी हैं जिनकी वेद वन्दना करता है यथा:—

ऋग्वेदे मंत्रभागे तृतीयाध्याये ८ मंडले ९ मन्त्रे।

अर्वाची सुभगे भवसीते वन्दामहेत्वा।
यथानः सुभगाससि यथा नः सुफलाससि॥

अर्थात्।

हे राक्षसों के अन्त करने वाली श्री जानकीजी! मैं

आपको प्रणाम करता हूँ हमको सुभग ऐश्वर्य्य का दान करो प्रति पक्ष का नाश करो, हमपर अनुकूल हो।

पुनः सामवेदे आरण्य कांडे २३ मन्त्रे।

आप्रागाद्भद्रा युवती रहनः केतून्समृत्स्नती।
अभूद्भद्रा निवेशिनी विश्वस्य जगतोरात्रिः॥

अन्वयः।

भद्रायुवतिः अहनः केतून्समृत्स्नती रात्रिः आप्रागात्। विश्वस्य जगतः निवेशिनी अभूत॥

अर्थात्।

कल्याणकारिणी अर्थात् कल्याणरूपा, सबको मिलाने वाली दिनके प्रकाशको समेटती हुई रात्रि नाम श्रीजानकीजी सम्यक प्रकारसे प्रणाम प्रबला आईं वह रात्रि श्रीजानकीजी सम्पूर्ण जगत के स्व स्व स्थान में प्रवेश करने वाली हुईं। यहांपर रात्रि नाम श्रीजानकी जी का तत्र प्रमाणेः—

श्री मद्वाल्मीकीये रामायणे सुन्दरकांडे।

यां सीतेत्यभिजानासि येयं तिष्ठति ते गृहे।
कालरात्रीति तांविद्धि सर्वलङ्कविनाशिनीम्॥

अन्वयः।

हे रावण यां सीता इति अभिजानासियायं ते गृहे

तिष्ठति तां सर्व्वलंकाविनाशनीं कालरात्रिं इति विद्धि

अर्थात् ।

श्रीहनुमानजी कहतेहैं कि हे रावण ! जिसको सीता ऐसा तुम जानता है जो यह सीता तुम्हारे घर में स्थित हैं उन सीता को सर्व लंका नाश करने वाली कालरात्रि तुम जानो ॥

इसी प्रकार दूसरी श्रुति कहती है यथा:—

अथर्ववेदसंहितायां तृतीयकांडे २ अनुवाके १० सूक्ते

सम्वत्सरस्य प्रतिमांयां त्वां रात्र्युपासमहे।
सान आयुष्मतींप्रजां रायस्पोषेण संसृज॥

अन्वय ।

हे रात्रि श्रीजानकी सम्वत्सरस्य प्रतिमां यांत्वां उपासमहे सा नः रायस्पोषेण आयुष्मतीं प्रजां संसृज॥

अर्थात् ।

हे रात्रि श्रीजानकी जी ! सम्बत्सरोपलक्षित सर्व काल सदृश जिसको तुमको हम उपासना करते हैं सो तुम हम सब को ऐश्वर्य्य से पुष्ट दीर्घ जीने वाली प्रजा सम्यक् प्रकार से सृष्टिको करो अर्थात् देवो ।

श्रुति स्मृति से स्पष्ट ज्ञात होता है कि षिञ बन्धने

से श्रीसीता पद सिद्ध है।

सब के बांधने वाली काल रात्रि से स्पष्ट है कि सर्व जीव के उत्पत्ति पालन संहार करने वाली हैं।

इसी से राजा लोग रात्रि नाम्नी श्रीजानकी जी की प्रतिमा बनाकर पूजन करके पश्चात् रात्रि को शयन करते हैं। यह अथर्वेदीय कल्प में प्रसिद्ध है वह कल्प अनेक हैं नक्षत्र, कल्प, विश्वामित्र कल्प, बशिष्ठ कल्पादि।

सिनोति सर्वन्विध्नाति स्ववशं करोति इतिसीता॥

सब कोई को बांधकर अपने वश में कर लेवे उसे सीता कहते हैं।

कहां तक कहा जाय विश्वमोहन श्रीरामजी उन को भी अपने बश में किये हैं।

तथा च बाल्मीकीये बाळकांडे।

रामस्तुसीतया सार्द्धं विजहार वहून् ऋतून।
मनस्वी तद्गतमनातस्या हृदि समर्पितः॥

अन्वय

रामः च सीतयासार्द्धं वहून्ऋतूनविजहार कीदृशः मनस्वी तद्गतमनाः तस्या हृदिसमर्पितः।

अर्थात्।

श्रीरामजीने श्रीजानकीजू के संग बहुत ऋतुतक भाव बहुत काल तक बिहार किया।

कैसे श्रीरामजी हैं मनरवी नाम धीरोदात्त गम्भीर नायक श्रीजानकीजी ही में जिनका मन हमेशा बंधा रहता है और श्रीजानकीजी के हृदय में सदा समर्पित हैं अर्थात् स्वरूप से रहते हैं भाव तनमन दोनों ही श्रीजानकीजी के स्वरूप में बंधे रहते हैं ।

उसी को श्रीगोस्वामिपादसुन्दरकांड में श्रीकिशोरी जी से श्रीरामजी का सन्देश श्रीहनुमानजी कहते हैं कि "तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा । जानत प्रिया एक मन मोरा ।सो मन रहत सदा तोहि पाहीं । जानुप्रीति रस इतनेहि माहीं" इत्यादि ।

अतः ऐसी श्रीमिथिलाधिपराजकिशोरी श्रीराम प्राण प्यारीजूका जो भक्त संवधाश्रय लेतेहैं उनको अपनानेमें कैसी प्रसन्नता है । वह सखी संवधिनी भावना किसी नातेसे पुष्टि और सिद्ध होती है इसी से पिता माता भ्रातृ भगिनी पति आदिक का भी उपदेश आचार्य्य लोग करते हैं ।

इस सम्बन्ध में प्रायः लोग शंका करते हैं कि कल्पित है सो नहीं श्रुति सिद्ध है तथाः—

ऋग्वेदेवाजसनेयिसंहितायाम् ३२ अध्याये १० मंत्रे

सनोवन्धुर्जनिता सविधाताधामानि वेद-
भुवनानि विश्वा । यत्र देवा अमृत मानसाना-
स्तृतीये धामन्य ध्यैरयंत ॥

अर्थात् ।

सनोव॑धुः----वह शृंगार मूर्ति रसाकर मनोहर रसिक शिरोमणिश्रीरामजी हम सबों के बन्धु हैं, नाम सम्बन्धी हैं ।

वह संबंध अनेक तरह का है पितृपुत्रभाव, पति पत्नीभाव, सेवकसेव्यभाव इत्यादि ।

इससे स्पष्ट है कि सखी, सखा वात्सल्य इत्यादि भाव श्रुति सिद्ध हैं ।

इसी प्रमाण से आचार्य्य लोग सम्बन्ध-पत्र देते हैं इसमें कोई अवद्य नहीं है ।

जनिता--हम सब के पिता हैं ।

सविधाता---वही हस सब के विधाता हैं ।

भाव''''सब सुख के विधान करने वाले हैं । इसी विधाता पद से पति पत्नी भाव सिद्ध होता है क्योंकि सर्व सुख विधाता सिवाय पति के और कोई नहीं । यथाः--

श्रीमद्वाल्मीकीये अयोध्या काण्डे श्री जानकी वाक्यं अनुसूयां प्रति ।

असितस्य च दातारं भर्तारंका न पूजयेत् ।

अर्थात् ।

असंख्य सुखदाता पतिकी कौन स्त्री नहीं पूजा करैगी। इसी से इस श्रुति में विधाता का अर्थ पति है ।

पति पत्नी भाव से अतिशय सुख शृंगाररसमें है जो सर्वोत्तम है।

इसी कारण उत्तमाचार्य्य शृंगाररस की उपासना करते हैं।

धामानि वेद भुवनानि विश्वा—वह रसिकशिरोमणि श्रीरामजी श्रीमिथिला अयोध्या आदि धाम के ज्ञाता हैं। इस से शृंगाररस भूमि सूचित होती है और सखी आदिकउनके उद्दीपक विभाव सुचित हैं।

यत्रदेवा अमृतमानसानास्तृतीयेध्यैरयंत—जिनधामों में देवभाव प्राप्त हुए परिकर लोग अमृत को प्राप्त होकर जिस तृतीय धाम में विहार करते हैं।

इस श्रुति से स्पष्ट है कि जीव श्रीरामजीके सम्बन्ध विना तृतीय धाम में विहार नहीं कर सकता है।

अथ तृतीयधाम निरूपणम्।

सामवेदीय छान्दोग्योपनिषदि अष्टमप्रपाठके।

अरश्च ह्वैण्यश्चार्णवौतृतीयस्यमितोदिवितदैरं मदीयं शरः अश्वत्थ सोमसवनः अपरा जिता पूः विभुविमितम्।

अर्थात्।

इस पृथ्वी के तृतीय स्वर्ग में अर और रय दो समुद्र हैं

और ऐरं मदीयं-मदकारक सर्व रस भरा तालाब है।

सोमस्राची—पीपर है जिसे कौषीतकी उपनिषत् में तैल वृक्ष कहते हैं, अयोध्या के मध्य में कल्पवृक्ष कहते हैं उसी को कहीं सोमवट कहते हैं।

अपराजिता:---जिसको कोई जीत न सके ऐसी पुरी है जिसे अयोध्या, साकेत सान्तानिक, स्वर्ग, ब्रह्म लोक आदि कहते हैं।

विभुविमितम्----व्यापकश्रीरामजी से निर्म्माण किया हुआ मंडप है। यथा अयोध्यनगरे रम्येरत्नमंडपमध्यगे। रमेरत्कल्पतरोमूलेरत्नसिंहासनं शुभम् इत्यादि जिसे श्रीराम महामंत्र राज षडक्षरउपदेश के समय आचार्य्य लोग ध्यान बतलाते हैं।

इस प्रकार इस सम्प्रदाय की सूचक बहुत मंत्र हैं। विस्तार भयसे नहीं लिखा गया। विज्ञ लोग तो जानते होंगे। अज्ञ लोग विस्तार होने से नहीं समझेंगे अतः संक्षेपतः किया गया है।

ब्रह्मसूत्रे चतुर्थाध्याये।

मुक्तैश्वर्य्याविर्भावावसरे श्रीरामानुजस्वामिना जीवब्रह्मणोर्जगद्व्यापारवर्जितासाम्यसम्पत्तिर्वर्णिता तथा श्रुतयः।

अर्थात्।

ब्रह्म सूत्र के चतुर्थाध्याय में मुक्त जीवों के ऐश्वर्य्य समय

में श्रीरामानुज स्वामीजीने जीव ब्रह्मकी बराबर सम्पत्ति वर्णन किया है केवल जगत् व्यापर जीव नहीं कर सकता है। उसी तरह से श्रुतियां कहती हैं।

सामवेदीयछान्दोग्योपनिषदि अष्टमप्रपाठके दहरविद्यायाम्।

स यदि स्त्रीलोककामोभवति संकल्पा देवास्यस्त्रियः समुत्तिष्ठन्ति संकल्पादेव पितरः इत्यादयः।

अर्थात्।

वह मुक्त जीव यदि स्त्री लोककी कामना करता है तो उस के संकल्प मात्र से बहुत सी स्त्रियां उठकर खड़ी हो जाती हैं जैसा कौषीतकी उपनिषत् का प्रमाण ऊपर बर्णन हो चुका है उसी तरह संकल्पही से पितृ लोक आदि जानना चाहिये।

ब्रह्मसूत्रे चतुर्थाध्यायेमोक्षपादे।

भोगमात्रसाम्यलिंगाच्च जगदव्यापारवर्जं प्रकरणादसन्निहतत्वाच्च।

अर्थात्।

ब्रह्म सूत्र के चतुर्थाध्याय मोक्ष पाद में है कि ब्रह्म के साथ इस जीव का भोग मात्र बराबर है इस में श्रुति प्रमाण है। बराबर है लेकिन जगत के उत्पत्यादि करने में बराबर

नहीं है। श्रुति के प्रकरणसे जाना जाता है कि ब्रह्म जहां २ व्याप्त है और जहां तक सर्व जगत है वहां वहां मुक्तजीव समीप में नहीं रह सकता है। इसी से जगत व्यापार में मुक्त जीव असमर्थ है।

मुक्त स्वरूपश्च।

सामवेदीयछान्दोग्योपनिषदि भौमविद्यायां सप्तमेप्रपाठके।

स एकधाभवति त्रिधाभवति नवधाशतधा सहस्रधा पुनश्चैकधेत्यादयः।

अर्थात।

वह मुक्त जीव एक प्रकार होता है पुनः तीन प्रकार होता है नव प्रकार, सौ प्रकार सहस्र प्रकार भाव अनंत प्रकार होकर फिर एक प्रकार होजाताहै इत्यादि बहुत वाक्य हैं।

स्त्रीपुंस्त्वाभावपुरःसरस्वेच्छामयस्त्यादि शरीरकं प्रतिपादितम्।

यजुर्वेदीयश्वेताश्वतरोप निषदि ५ अध्याये १० मंत्रे।

नैवस्त्री नपुमानेषु नचैवायं नपुंसकः।
यदयच्छरीरमादत्ते तेन तेन स रक्ष्यते॥

अर्थात।

स्त्री पुरुष के अभाव पूर्वक स्वेच्छामय शरीर धारण

शक्ति लिखा है कि यह जीव न स्त्री है न पुरुष है न नपुंसक है जो जो शरीर धारण करता है उस शरीर धर्मानुसार रक्षित होता है अर्थात् वही होता है। इसी प्रकार ब्रह्म भी है ।

यथा श्वेताश्वतरोपनिषदि ४ अध्याये ३ मंत्रे ।

त्वंस्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी त्वं जीर्णो दण्डेन वञ्चयसि त्वं जातो भवसि विश्वतोमुखः ॥

श्रुतिभगवती श्रीरामजी की स्तुति करती है कि आपस्त्री हैं, आप पुरुषहैं, आपकुमार हैं, और आप कुमारी भी हैं। आप बूढ़े होकर दण्ड लेकर चलतेहो कहां तककहा जाय आप अनेक रूप-धारी हैं। इससे मालूम होता है कि जीव और ब्रह्म कोई शरीर के आधीन नहींहैं । स्वेच्छामय शरीरधारी हैं। अतएव जीवोंका मुक्तावस्थामें स्त्री पुरुष भावना श्रुति सम्मत है जिसे श्रीमद्भगवतगीतामें भी निरूपण करते हैं कि—यं यं वापिस्मरन्भावमिति । उसीको श्रीमद्गोस्वामिपाद लिखते हैं कि—'जेहि विधि रहा जाहि जस भाऊ । तेहि तस देखे कोशलराऊ ॥

यथा पूर्व मीमांसायाम् वैदिक कर्म कलापाद पूर्वोजायते ते न कर्मठजीवानां स्वर्ग भोगार्ह शरीरो जायते तेन स्वर्गे चिरंमोदते तथोत्तर मीमांसासिद्धान्ते ।

अर्थात् ।

जिस तरह पूर्व मीमांसा में लिखा है कि वैदिक कर्मों से अपूर्व उत्पन्न होता है उसी अपूर्व से कर्मकारी जीवों को स्वर्ग भोग योग्य शरीर उत्पन्न होता है उसी शरीर से स्वर्ग में बहुत काल तक सुख भोगते हैं उसी तरह से उत्तर मीमांसा का भी सिद्धान्त है ।

ब्रह्मोपासनात् अपहतपाप्मत्वादि विशिष्ट स्वतः सिद्धस्वरूपाविर्भावोभवति ॥

अर्थात् ।

ब्रह्म उपासना से जिस में कोई पाप नहीं है ऐसा गुण विशिष्ट स्वतः सिद्ध स्वरूप आविर्भाव होताहै ।

यजुर्वेदीय तैत्तरीयोपनिषदि द्वितीया वल्या मेकादशानुवाके ।

ते न सोऽश्नुते सर्वान्कामान् सहब्रह्मणा विपश्चिता ।

अर्थात् ।

वह मुक्तजीव सर्वज्ञ ब्रह्म के साथ सर्वकाम प्राप्ति करता है ।

इसी से सहस्रगीति के रचयिता श्रीशठकोप स्वामी जी में शृंगार भावको दिखाते हुए दक्षिणात्याचार्य्यों का यह पद्य भी प्रमाण है । यथाः—

पूर्वानुसंहित मनोहर शौरिमूर्तेः
संश्लेष लोल हृदयस्तद लाभखिन्नः ।
लाभे स्वयत्नमपिकर्तुमियेष दुःखा
द्भार्य्या दशा चपरि गृह्य मुनिस्तृतीये ॥

अर्थ भाव ।

सहस्रगीति पंचमशतक तृतीय दशक में श्रीशठकोप मुनिजी मनोहर मूर्ति श्रीरामजी को पूर्वकाल में अनुभव किये हैं पुनः उस मूर्ति को सम्यक् प्रकार से हृदय में लगाने के लिये भार्य्या भाव ग्रहण कर यत्न करके चले ।

मुक्तजीवावस्थास्वरूप

सामवेदीय छान्दोग्योपनिषदि अष्टम प्रपाठके ।

दहरविद्यायाम्

एष आत्मापहत पाप्मा विजरो विमृत्यु
र्विशोकोर्विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्य
संकल्प इति ।

अर्थात् ।

यह जीवात्मा अपहत पाप्मा अर्थात् पाप रहित है ।
विजरः—वृद्धावस्था रहित अर्थात युवा । विमृत्युः—मृत्यु

रहित अर्थात् अमर। विशोकः—शोक रहित सदाआनन्द-मय। विजिघत्सः—क्षुधा रहित। अपिपासः—प्यास रहित। सत्यकामः—सच्ची कामना। सत्यसंकल्पः--जो संकल्प करै वह सिद्ध है।

मुक्ति प्राप्ति साधन यथा स्मृतौ।

प्राणायामेन हरेद्दोषान् धारणाभिश्च किल्विषम्।
प्रत्याहारेण संसर्गान् ध्यानेनानीश्वरान्गुणान्॥

अर्थात्।

स्मृति में लिखा है कि प्राणायम् करके दोष को हरै धारण करने से पाप को नाश करै। 'प्रत्याहार अर्थात् मन को खींच सब से वैराग्य करके श्रीरामजी के स्वरूप में लगाने से संसर्ग को नाश करै अर्थात् सर्व संग छोड़ और ध्यान करके अनीश्वर अर्थात् ईश्वर से व्यतिरिक्त माया गुण का नाश करै।

ब्रह्मसूत्रे मोक्षपादे।

फलमत उपपत्तेः।

अर्थात् इस जीव का साधन फल ईश्वर से होता है भाव यही ईश्वर देता है। उपपत्तेः—ऐसाही शास्त्र का निश्चय है।

अतो मुमूक्षूणां स्वेच्छामया जरामरस्त्रीपुरुषाकारभावना श्रुतिमूलेतिदिक् ।

अर्थात् ।

इस लिए मुमुक्षुवों को अपनी इच्छानुरूप जरामरण रहित स्त्री अथवा पुरुष की आकार भावना श्रुति मूलक है अर्थात श्रुति इसका मूल प्रमाण है ।

सामवेदीय छान्दोग्योपनिषदि अष्टमे प्रपाठके ।

अश्व इवरोमणि विधूयपापं चन्द्रइवराहो र्मुखात्प्रमुच्य धूत्वाशरीरमकृतं कृतात्मा ब्रह्म लोकमभिसम्भवामीत्यभिसम्भवामीति ।

अर्थात् ।

जिस तरह घोडा बारको झार देताहै उसीतरह पाप को झार कर और जिस तरह से चन्द्रमा राहु के मुख से छूट जाता है उसी तरह से कर्म्ममय शरीरको ध्वंश करके कृतात्मा अर्थात् कृतार्थ होकर अकृतं अर्थात् कर्मरहित ब्रह्मलोक अर्थात् साकेत श्रीअयोध्याजी में सम्यक् प्रकार से सर्व भांति भावनानुसार रहैंगे, अर्थात् स्वेच्छाचारी रहैंगे रहैंगे भाव निश्चय रहैंगे ।

अथर्व संहितायां ४ काण्डे २ सूक्ते ७ मंत्रे

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दधार पृथ्वींद्यामुतेमां कस्मैदेवाय हविषाविधेम ॥

अन्वयः ।

कस्मैदेवाय आनन्दरूपाय रामायहविषान्नेन विधेम परिचरेमपरिचर्य्याकुर्य्यां सेवामःइत्यर्थः की दृशः श्रीरामः हिरण्यगर्भः यथा वाल्मीकीये अयोध्या कांडे "हिरण्य नाभ इति वाक्यात" अग्रे समवर्ततभूतस्य जातः प्रादुर्भूतःसन् एक एव पति आसीत् स पृथ्वींदधार ऊ द्यां दधार धृतवान् पोषितवान् इत्यर्थः

अर्थात् ।

हम सब आनन्द रूपी हिरण्यगर्भ श्रीरामजी का हविष्य अन्नोंसे सेवा करते हैं वह श्रीरामजी सबसे पहले थे अवतार लेकर सर्व जीव मात्र के एक ही पति थे वही श्रीरामजी पृथ्वी और स्वर्ग के आधार भाव पोषण करने वाले थे । इस मंत्र से जीवमात्र के पति श्रीरामजी स्पष्ट हुए । "गोविन्द एव पुरुषो ब्रह्माद्याः स्त्रियएव च" अर्थात् गोविन्दही एक पुरुष हैं और ब्रह्मा आदि से लगाकरजितने जीव हैं वे सब स्त्रीही स्पष्ट हुए ।

पातंजलि योग सूत्रे

स्वरूपावास्थितिर्वाचिच्छक्तेः ।

अर्थात् ।

अपने स्वरूप में स्थित जो चैतन्य शक्ति जीव है उसी को कैवल्य कहते हैं अर्थात् मुक्तजीव कहते हैं ।

शक्ति कहनेही से जीव का स्त्रीत्व स्पष्ट हुआ अभिप्राय मुक्तावस्था में सब जीव स्त्री रूप होकर रहते हैं यथा गीता-याम् "अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिंविद्धिमेपराम । जीव भूतां महावाहो ययेदं धार्य्यतेजगत्" ॥

ततएव स्वभावोयं प्रकृतेर्भाव ईश्वरः ।

अर्थात् ।

इसी कारण से प्रकृति का यह स्वभाव ही है कि ईश्वर में स्त्री भाव से रहती है भाव प्राकृत सृष्टि स्त्री भाव से ईश्वर की सेवा करती है ।

इस से स्पष्ट है कि सम्पूर्णजीव सम्यक् प्रकार स्त्री भावही से ईश्वर की सेवा कर सकता है दूसरे भाव से कदापि नहीं कर सकता है ।

किंच ये रसिकापसदाः कर्मजमलीमसः प्राकृतशरीरेणावृह्मणासहमिथ्याचेष्टाकारिणास्ते शासनीयाहेयाश्चेति ।

अर्थात् ।

जो रसिकों में नीच कर्म जन्य मलीन हृदय प्राकृत शरीर से परब्रह्म श्रीरामजी के साथ विरुद्ध चेष्टा करते हैं वे दंड करने के लायक और त्याग करने योग्य हैं ।

किंच ये वैष्णवाः श्रीसीतारामसेवकाः ते यदिमुक्तावस्थायां स्त्रीरूपेण सेवांकरिष्यन्ति तेषां कः श्रुतिस्मृतिव्यतिक्रम इति विद्वद्भिः परामर्शनीय इतिशम्

अर्थात् ।

जो वैष्णव श्रीसीतारामजी के सेवक यदि मुक्तावस्था में अर्थात् मुक्त शरीर भाव अप्राकृत शरीर से स्त्री रूप से सेवा करैंगे उनको कौन श्रुति स्मृति व्यतिक्रम अर्थात् विरोध है भाव वे कौन श्रुति स्मृति का मर्याद भंग करते हैं यह पंडितों के विचार करने योग्य है ।

अतो वेदसम्मितः श्रीसुन्दरमणिसन्दर्भ आर्षः सर्वर्षिसम्मतः

एवमादिरामायणकोशलखंडादयोपि विज्ञेयाः ।

इतिश्री वैदिकमणिसंदर्भ संक्षेप परिशिष्टो निखिलशास्त्र

निष्णात मधुरर्षि श्रीमल्ललित किशोरी शरणजिझहानुभाव श्रीमिथिला मंडलांतर्गत गौतमाश्रामाहिल्या स्थान निवासि ज़िला दरभंगा कृत्परि समाप्तइतिशुभम्भूयात्।

मिती माघासित ३०
रविवार सं १९८४

लेखक—
पुरुषोत्तम शरण,
श्रीसद्गुरुसदन सरयूतटपापमोचनघाट
श्रीसियामोहिनी निकुंज,
श्रीअयोध्याजी।